महात्मा गाँधी के आर्थिक विचारों की युगीन प्रांसगिकता

*राधाकिशन

महात्मा गाँधी के आर्थिक विचारों का आज के संदर्भ में सर्वाधिक महत्व है। उन्होंने आर्थिक विकास की अवधारणा को नैतिकता से जोड़ा एवम् सत्य तथा अहिंसा को आर्थिक विचारों का भी आधार बनाया। उन्होंने पदार्थवादी अर्थशास्त्र के बजाय आत्मवादी अर्थशास्त्र की कल्पना की है। रामाश्रय राय के अनुसार–''गाँधी मृत पदार्थ के अर्थशास्त्र की इसलिए आलोचना करते हैं क्योंकि यह शारीरिक सुख की पूजा में मगन है तथा नैतिकता एवं आत्मवाद के पतन में सहायक है।

गाँधी कोई शास्त्रीय ढ़ग के अर्थशास्त्री नहीं थे, वे तो सहज विचारक थे। जिनका जीवन एवं दर्शन एक ऐसी आर्थिक व्यवस्था की रचना का प्रयास था जो पूर्णतः मानवीय मूल्यों पर आधारित हो। गाँधी का आर्थिक विचार जीवन के सर्वागींण विकास की भावना से प्रेरित है। उनका मानना था कि आर्थिक प्रणाली ऐसी होनी चाहिए जिससे कोई भी व्यक्ति भूखा, नंगा न रहे चाहे यह भारत हो या विश्व का अन्य कोई देश। दूसरे शब्दों में हम यह सकते हैं कि प्रत्येक व्यक्ति को कार्य करने का अवसर प्राप्त होना चाहिए। ताकि वह दो समय की आजीविका स्वाभिमानपूर्वक प्राप्त कर सके। इस आदर्श को तभी प्राप्त किया जा सकता है जबकि मूलभूत आवश्यकता सब कुछ वैसे ही मिलना चाहिए जैसे कि प्रकृति प्रदत्त हवा और पानी। ससांधानों के न्याय सम्मत वितरण इस सिद्धांत का उल्लेख करने का परिणाम ही दरिद्रता है। इसका प्रत्यक्ष परिणाम आज न केवल इस अप्रसन्न भूमि पर है अपितु विश्व के अन्य भागों में भी है।''

इस तरह गाँधीवादी अर्थशास्त्र दरअसल मार्शल, पीगू एवं कीन्स के अर्थशास्त्र की भांति न तो किसी सार्वभौमिक व सार्वकालिक सिद्धांतों की रचना ही करता है और न कोटिल्य की भांति अर्थशास्त्र की पुस्तक का प्रस्तुतीकरण करता है। अपितु यह तो उनके द्वारा जीवन के सभी पहलुओं पर प्रस्तुत विचारों का सार है जो हमें वर्तमान में हमारे जीवन के सामने आने वाली गंभीर आर्थिक समस्याओं के समाधान का व्यवहारिक हल सुझाता है।

गाँधी ने अपने विचार मानवता को केन्द्र बिन्दु रखते हुए दिये हैं चाहे यह उनके सामाजिक, राजनैतिक, धार्मिक विचार हो या आर्थिक मानव मात्र का उद्धार ही उनका लक्ष्य रहा है। गाँधी को ऐसे आदर्श एवं सिद्धांत स्वीकार नहीं थे जिसमें भौतिक, आध्यात्मिकता पर अपना प्रमुख जमाने और मनुष्य आर्थिक परिस्थितियों से जूझता हुआ अनैतिकता से गठबंधन कर बैठे। इंसान की कमाई का मकसद केवल या भौतिक सुख पाना नहीं है, बल्कि अपना नैतिक और आत्मिक विकास करना है। गाँधी ने अर्थशास्त्र को सापेक्ष तथा विश्लेषणात्मक विज्ञान की अपेक्षा एक नैतिक विज्ञान के रूप में माना है। इस कारण उन्होंने अर्थशास्त्र और नीतिशास्त्र में कोई विभेद नहीं माना है और कोई विभाजक रेखा नहीं खींची। उनके अनुसार वह अर्थशास्त्र जो नैतिक मानदण्ड़ों को तिरस्कृत या विस्तृत करता है असत्य है। गाँधी मूलतः एक धार्मिक वृत्ति वाले व्यक्ति थे पर किसी भी अर्थ में रूढ़िवादी नहीं। उनका धर्म सत्य का पोषक एवं अंहिसा का प्रणेता था। इसलिए उन्होंने अर्थशास्त्र के क्षेत्र में भी मानवीय आदर्शों और मानवीय कल्याण हेतु सत्य और अंहिसा का प्रतिपादन किया। गाँधीवादी अर्थशास्त्र पर टिप्पणी करते हुए जे.पी. कृपलानी, लिखते हैं–''अर्थशास्त्र पर लिखी जाने वाली किताबों में जो आम–कायदे कानून बताये जाते हैं वे किन्हीं उसूलों के मातहत होते हैं। लेकिन गाँधी के अर्थ विचार में ऐसा भी नहीं होता। सिर्फ दो जीवन उसूल है जिनके मातहत गाँधी के आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक और दूसरे सभी इलामात रहा करते हैं। वे हैं–सत्य और अंहिसा। इन दो कसौटियों पर मानो जो चीज खरी नहीं उतरी उसे गाँधीवादी नहीं कहा जा सकता।

उनकी अर्थ नीति, स्वदेशी और श्रम प्रदान आर्थिक रचना क आदर्श के इर्द–गिर्द ही नज़र आती है जिसका मुख्य उद्‌देश्य मानव मात्र का कल्याण है। गांधी का चिंतन एवं कार्यक्रम उस वचन बद्धता से अनुप्राणित था कि जीवन के किसी भी क्षेत्र में अधिकारवाद, निरकुशता एवं अन्याय का निराकरण करना प्राथमिक है।

आर्थिक एवं औद्योगिक क्षेत्रों में भी गांधी मानते थे कि नितांत पश्चिमी भौतिक आधारों का भारतीय सन्दर्भ में औचित्य संदिग्ध है। गांधी ने राज्य की शक्ति की निरंकुशता के समान ही आर्थिक एकाधिकार, मशीनीकरण, पूंजी–एकत्रिकरण एवं शोषण को गंभीर अपराध माना। वे पश्चिमी औद्योगिकरण प्रदत्त आर्थिक प्रक्रिया को भारत की समस्याओं का समाधान मानने के विरोधी थे। वे औद्योगिकरण को नैतिक पतन का कारण भी मानते थे। गांधी के अनुसार मानव जीवन का लक्ष्य सत्य की खोज है। वे आत्मा को प्राथमिकता देते थे, यद्यपि वे मानव शरीर की आवश्यकताओं के प्रति भी सजग थे। उन्होंने इन आवश्यकताओं का समाधान खोजने का प्रयत्न किया, किन्तु ऐसा करते हुए मुख्य साध्य सत्य का बलिदान नहीं किया, इसलिए उनके सभी आर्थिक सिद्धान्त उनके मूलभूत सिद्धान्तों सत्य और अंहिसा के साथ सुसंगत थे। आर्थिक समानता सबको रोटी तथा शरीर की आवश्यकताओं की पूर्ति का लक्ष्य अंहिसात्मक उपक्रमों द्वारा व्यक्तित्व स्वाधीनता और श्रम की प्रतिष्ठा के साथ प्राप्त किया जा सकता है, हिंसा द्वारा नहीं।

व्याख्याता, इतिहास विभाग, श्री खण्डेलवाल वैश्य स्नात्तकोतर महाविद्यालय, जयपुर

सन् 1937 में गांधी ने अर्थशास्त्र संबंधी अपने विचारों की व्यापक व्याख्या करते हुए लिखा, 'सच्चा अर्थशास्त्र कभी भी सर्वोच्च नैतिक स्तर का विरोध नहीं करता, ठीक वैसे ही जैसे सभी सच्चे नीतिशास्त्र अपने नामानुकूल अवश्य ही अच्छे अर्थशास्त्र भी होने चाहिए।' वह अर्थशास्त्र जो कुबेर की पूजा करता है और उन लोगों को जो शक्तिशाली है, दुर्बल लोगों के विकास द्वारा धन संग्रह करने का अवसर देता है, वह शास्त्र सर्वथा झूंठा और भयानक है। वह शास्त्र संहार का सूचक है। सच्चा अर्थशास्त्र तो सामाजिक न्याय का प्रतीक है। वह सभी लोगों का सामान्य रूप से कल्याण चाहता है, जिसमें कमजोर भी शामिल है, और सुन्दर जीवन के लिए पैसा शास्त्र अत्यन्त आवश्यक है।

गांधी ने मार्क्स की तरह अर्थशास्त्र को आधारभूत शास्त्र एवं आर्थिक संरचना को समाज की आधारभूत संरचना माना है। वे नैतिकता को समाज की आधारभूत सरचना मानते थे तथा राजनीति की तरह अर्थनीति को भी नैतिकता पर आाधारित मानते थे। समाज एवं व्यक्ति के व्यवस्थित विकास के लिए आर्थिक गतिविधियों को मानवीय, स्वभाव प्राकृतिक नियम एवं ईश्वरीय इच्छा के अधीन मानकर उससे सुधार लाने का प्रयास गांधी ने हमेशा किया था।

गांधी ने आधुनिक पूंजीवाद को शोषण का प्रतीक माना है। वे पूंजी और श्रम के गहन संघर्ष को पूंजीवाद की अपेक्षा न्यासिता द्वारा सुलझाना चाहते थे। जे.डी. सेठी के अनुसार–'गांधी ने श्रमिक एवं पूंजी के मध्य के हितों के संघर्ष को स्वीकार किया है। गांधी ने इसलिए श्रमिक व पूंजी के मध्य न्यासिता सिद्धान्त के अर्न्तगत समन्वय बनाने पर जोर दिया है।

गांधी ने आर्थिक समानता स्थापित करने के लिए आवश्यक माना कि पूंजी व श्रम के मध्य संघर्ष समाप्त हो तथा पूंजी का कुछ हाथों में एकत्रीकरण न हो। गांधी ने इस सन्दर्भ में पूंजीवाद की ही आलोचना नहीं की, अपितु राज्य द्वारा नियंत्रित पूंजीवाद की भी आलोचना की। राज्य के पूंजीवाद तथा व्यक्तिगत पूंजीवाद में गांधी ने व्यक्तिगत पूंजीवाद को कम दोषपूर्ण माना, गांधी यद्यपि सभी प्रकार के पूंजीवाद के विरोधी थे, इसलिए एक छत्र राज्य के संगठन में शक्ति के केन्द्रीकरण की अपेक्षा गांधी ने संरक्षकता के विचार के प्रसार को प्रधानता दी।

गांधी ने श्रम की पवित्रता व महत्वता को स्थापित किया। शारीरिक श्रम से विमुख होने की इच्छा रखना स्वयं बुरी स्थिति है। यह बड़ी दुःखपूर्ण स्थिति है कि लाखों लोगों ने अपने हाथों को हाथों की तरह काम में लाना छोड़ दिया है। गांध ी ने आर्थिक असमानताओं को दूर करने के लिए नैतिकता की दुहाई दी।

आज यंत्रवाद एवं मशीनीकरण का इतना प्रभाव है कि हम इस युग को ही औद्योगिक युग कहने लगे है। उन्होंने यंत्रीकरण, उद्योगवाद एवं मशीनीकरण का विरोध किया। उनका विश्वास था कि बड़े पैमाने पर उत्पादन से ही विभिन्न सामाजिक और आर्थिक दोष उत्पन्न हुए है। मशीनों का उपयोग मनुष्यों को आलसी बना देता है और वह परिश्रम से कतराने लगता है। मिल, उद्योग और यंत्रों के उपभोग से हिंसा का विस्तार होता है। गांधी ने श्रम की पवित्रता व महत्वता को इसलिए स्थापित किया। गांधी ने शारीरिक एवं मानसिक श्रम में भेद को समाप्त करने की कोशिश की। शारीरिक श्रम से विमुख होने की इच्छा रखना स्वयं बुरी स्थिति है। यह एक बड़े दुःखपूर्ण स्थिति है कि लाखों लोगों ने अपने हाथों की तरह काम में लाना छोड़ दिया है।

गांधी ने कहा 'भारत में लाखों लोग ऐसे है जिन्हें दिन में एक ही बार खाकर संतोष करना पड़ता है और उनके उस भोजन में भी सूखी रोटी और चुटकी भर नमक के सिवा और कुछ नहीं होता है। हमारे पास जो कुछ भी है उस पर हमें और आपको तब तक कोई अधिकार नहीं है जब तक कि उन लोगों के पास पहनने के लिए कपड़ा और खाने के लिए अन्न नहीं हो जाता। अतः गांधी लिखता है कि 'अर्थरचना ऐसी होनी चाहिए कि किसी को भी अन्न और वस्त्र के अभाव की तकलीफ न सहनी पड़े।

सच्चा अर्थशास्त्र तो सामजिक न्याय की हिमायत करता है, वह सम्मान भाव से सबकी भलाई का, जिसमें कमजोर भी शामिल है, प्रयत्न करता है। इसलिए गांधी ने आधुनिक यांत्रिक, औद्योगिक अर्थतंत्र को मर्यादित करने का आग्रह किया। उन्होंने लिखा "आज जो जनता में उन यंत्रों का एक पागलपन सा साकार हो रहा है, जिन्हें श्रम की बचत करने वाला बताया जा रहा है। हां उनसे श्रम की बचत तो ऐसे होती है पर उनके कारण लाखों लोगों की रोटी छिन रही है। और वे राह के भिखारी बन कर भूखे घूम रहे है। मशीनीकरण के लाभवादी प्रवृति को इंगित करते हुए गाँधी ने माना कि मानववाद को त्याग कर कारखानों का उद्देश्य दामों में वृद्धि व धन संचय मात्र रह जाता है। साम्राज्यवादी नीतियों की आलोचना करते हुए गाँधी यह मानते थे कि मशीनीकरण का विकृत स्वरूप भारत में पहुंचा है।

भारत के संदर्भ में उन्होंने लिखा–"कल–कारखानों ने यूरोप को उखाड़ना शुरू कर दिया और अब इनकी हवा हिन्दुस्तान में पहुंच गई है। मुम्बई की मिलों में काम करने वाले मजदूर पूरे गुलाम बन गये हैं। वहां काम करने वाली स्त्रियों की दशा देखकर तो हर आदमी का कलेजा कांप उठेगा जब मिलों की बाढ़ नहीं आई थी तब ये स्त्रियाँ कभी भूखी नहीं मरती थी। रस्किन की तरह गाँधी को भी उद्योगवाद के बड़े चरण, मानव–समाज के आधारभूत नैतिक आदर्शों के लिए सचमुच अभिषाप मालूम पड़े। उनके अनुसार उद्योगवाद असंख्य पापों और अनर्थों की जड़ है। गाँधी का यह अनुभव अपने देश में वैदेशिक उद्योगों से उत्पन्न कुप्रभावों पर आधारित है। उद्योगों के लिए काफी मात्रा में कच्चा माल और इसके तैयार माल

के लिए बड़ा बाजार चाहिए। इन दोनों के लिए अक्सर विदेशों पर निर्भर रहना पड़ता है। इस प्रकार अविकसित देशों का शोषण उद्योगवाद का एक आवश्यक अंग हो जाता है। गाँधी बड़े पैमाने पर उत्पादन के कट्टर विरोधी थे। गाँधी ने कहा कि 'मेरा स्पष्ट मत है और मैं उसे साफ–साफ कहना चाहता हूँ कि बड़े पैमाने पर होने वाला सामूहिक उत्पादन ही दुनिया की मौजूदा संकटमय स्थिति के लिए जिम्मेदार है। एक क्षण के लिए मान भी लिया जाए कि यंत्र मानव समाज की सारी आवश्यकताएँ पूरी कर सकते हैं तो भी उनका यह परिणाम तो होना है कि उत्पादन कुछ विशिष्ट क्षेत्रों में केन्द्रित हो जायेगा और इसलिए वितरणकी योजना के लिए हमें द्रविड़ प्राणायाम करना पड़ेगा। दूसरी और यदि जिन क्षेत्रों में वस्तुओं की आवश्यकता है वहीं उसका उत्पादन हो और वहीं वितरण हो नियंत्रण अपने आप हो जाता है। उसमें धोखाधड़ी के लिए कम गुंजाइश होती है और सट्टे के लिए तो बिल्कुल नहीं।

गाँधी के अनुसार आधुनिक सभ्यता वास्तव में सच्ची सभ्यता नहीं है। यह तो पाश्चात्य सभ्यता है। यूरोपिय सभ्यता के बारें में वे मानते थे कि यूरोपिय लोग अच्छे मकानों में रहते हैं। पहले एक व्यक्ति अपने योग्य भूमि में स्वयं खेती करता था अब एक व्यक्ति बहुत भू–भाग पर कृषि कर सकता है। पहले कुछ लोगों द्वारा मूल्यवान लेखन किया जाता था अब कोई भी कुछ भी लिखकर जनता का मस्तिष्क दूषित कर सकता है, पहले व्यक्ति स्वयं के शरीर से कार्य करता था अब प्रत्येक काम मशीनीकृत हो गया है, बटन दबाने की देर है हर काम तैयार है। यही सभ्यता है जिसमें नैतिकता का कहीं नाम नहीं है। इसके लिए भारत में कोई स्थान नहीं है। गाँधी का कहना था कि भौतिक सभ्यता एवं सुख सुविधाओं के पीछे भागना एक बुराई है।

औद्योगिक सभ्यता सभ्यता के तीव्र विकास ने मानव मात्र का जीवन खतरे में ड़ाल दिया। औद्योगिकरण विकास से शहरीकरण बढ़ा और औद्योगिक बस्तियों का निर्माण हुआ लेकिन उद्योगों में कार्य करने वाले श्रमिकों की दशा बड़ी दयनीय होती चली गई। जिसका कारण मशीनीकरण था क्योंकि बड़े पैमाने पर मशीनीकरण से रोजगार के अवसरों में कमी आई और गरीबी को बढ़ावा मिला। गरीबी एक अपने आप में अभिषाप है जो उद्योगीकरण देने है। इसी विषय व असहनीय स्थिति के कारण ही गाँधी ने उद्योगवाद का विरोध किया और कहा कि मनुष्य उद्योग के बिना जिंदा नहीं रह सकता लेकिन यंत्रोंद्योग के बारे में एक बडी चिंता है। यंत्र से उत्पादन तेजी से होता है और उसकी साथ इस प्रकार की अर्थव्यवस्था आती है जिसको कोई समझ नहीं सकता। जिसके बुरे परिणाम को उससे होने वाले लाभ की अपेक्षा ज्यादा जाना जाता है। सभी चाहते है कि हमारे देश में करोड़ों जवान लोग स्वस्थ और सुखी हों और आध्यात्मिक दृष्टि से उसका विकास हो। उस उद्देश्य की पूर्ति के लिए अभी तक हमें यंत्रों की आवश्यकता नहीं है। हमारे यहां अभी भी बहुत हाथ, बहुत ज्यादा बेकार है। लेकिन हमारा बौद्धिक विकास हो जायेगा और हमें महसूस होगा कि हमें यंत्रों की आवश्यकता है, तब हम अवश्य उनको ग्रहण करेंगे। हमें उद्योग चाहिए तो इसके लिए हमें उद्यमी बनना होगा। पहले हम स्वावलंबी बने तो हमें दूसरों के नेतृत्व की उतनी आवश्यकता नहीं रहेगी। एक बार हम अहिंसक आधार पर अपना जीवन घड़ ले, फिर हम यंत्रों का नियंत्रण करना जान जायेगें।

यंत्रीकरण ने उद्योगवाद को जन्म दिया और उद्योगवाद से गरीबी, बेरोजगारी, असमानता व भुखमरी पनपी। उस तरह उद्योगवाद इन समस्याओं को पैदा कर समाज ने अनैतिकता को पैदा करता है। अतः गाँधी मशीनीकरण से पहले स्वालम्बन लाने की बात कहते हैं और उद्योगवाद को अभिषाप के रूप में देखते हैं।

गाँधी उद्योगवाद के खिलाफ हैं परन्तु मानवीय उपभोग के लिए जरूरी एवं आधारभूत उद्योगों की स्थापना के गाँध ी पक्षधर थे। लेकिन वे उन उद्योगों का निर्माण एवं नियमन व राज्य के नियन्त्रण में रखने के पक्षधर थे। इतना होने के बावजूद हम यह नहीं कह सकते कि उन्होंने बड़े स्तर पर चलने वाले उद्योगों को मशीनीकरण के संदर्भ में उपयुक्त माना है। गाँधी पूर्ण रूपेण मशीनों के विरूद्ध नहीं थे। ए.एम. हक के अनुसार–''गाँधी आधुनिक तकनीक के उपयोग के विरूद्ध थे वह अविवेक गैर चुनिन्दा तरीके से आयातित तकनीक किंतु गाँधी इतना स्वीकार थे कि ऐसे कुछ बड़े उद्योग जरूर है जों आधारभूत आवश्यकताओं एवं अपनी उपयोगिता के कारण जरूरी हो। इन बड़े उद्योगों के संबंध में गाँधी के निष्कर्ष इस प्रकार थे–

1. मुख्य और केन्द्रस्त उद्योगों का राष्ट्रीकरण
2. औद्योगिक उत्पादन के केन्द्र एक ही स्थान पर न बने।
3. उत्पादन व्यक्तिगत संग्रह हेतु न होकर सामाजिक सेवा को दृष्टि में रखकर हो।
4. उत्पादन में शोषण की भावना का अभाव हो तथा,
5. मानवीय श्रम को उचित प्रतिष्ठा प्राप्त हो।

इस प्रकार गाँधी कुछ सुझावों के साथ बड़े उद्योग जो जरूरी हैं उनकी रियायत प्रदान करते हैं। सुरक्षात्मक पहलु को ध्यान में रखते हुए कड़े सरकारी नियन्त्रण में इन उद्योगों हेतु भी गांधी सकारात्मक रूख अपनाते हैं। लेकिन इसके साथ ही गाँधी ऐसी व्यवस्था चाहते थे जिससे बड़े उद्योगों एवं छोटे उद्योगों के बीच समन्वय स्थापित हो। उनका मानना है कि

बड़े उद्योग उत्पादन बढ़ाने में तो सफल रहते हैं। अतः बड़े कारखानों से सही लोक राज्य सुखानुभूति असंभव है। बड़े कारखानों से लोक राज्य नामुमकिन है। जो लोग चोटी पर होते हैं वे गरीब मजदूरों पर उनके रहन–सहन के तरीकों पर जिनकी तादाद भी कारखानों में चार पांच हजार तो होती ही है। एक तरफ दबाव डालते है और मनमानी करते हैं।

इस प्रकार गाँधी राष्ट्रीकृत उद्योगों की बात स्वीकार करते हैं लेकिन साथ ही मानवीय हितों को सर्वोपरि रखने की बात भी कहते हैं और हरेक बिन्दु पर मानवीय मूल्यों की रक्षा हेतु हमें सचेत करते हैं।

सन्दर्भ :–

1. रामाश्रय राय– सेल्फ एण्ड सोसायटी, रोज पब्लिकेशन, नई दिल्ली– 1984–पृ. 123
2. जे.पी. कृपलानी– गाँधी हिज लाईफ एण्ड थाट पब्लिकेशन डिविजन, नई दिल्ली–1971 पृ. 123
3. जे.सी. कुमारप्पा– गाँधी अर्थ–विचार, अखिल भारतीय सेवा संघ वर्घा, 1957, पृष्ठ–94
4 जे.सी. कुमारप्पा– गाँधी अर्थ–विचार, अखिल भारतीय सेवा संघ वर्घा, 1957, पृष्ठ–94
5. महात्मा गांधी 'आत्मकथा' नवजीवन प्रकाशन, अहमदाबाद, 1956 पृ. 220
6. यंग इण्डिया – 13.10.1921
7. हरिजन – 9.10.1933
8. जे.सी. कुमारप्पा– गाँधी अर्थ–विचार, अखिल भारतीय सेवा संघ वर्घा, 1957
9. एम.एल. दातंवाला– सेमीनार– (46) जून, 1963, पृ. 20
10. डॉ. वी.पी. वर्मा–दी पालिटीकल फिलोसफी ऑफ महात्मा गाँधी एण्ड सर्वोदय, लक्ष्मीनारायण अग्रवाल, आगरा, 1980, पृ. 2231
11. यंग इण्डिया 17.02.1927
12. श्रीमन् नारायण अग्रवाल– भारत के आर्थिक निर्माण पर गाँधीवदी योजना, पदमा पब्लिकेशन, बम्मई 1994 पृ. 37
13. यंग इण्डिया : 17.02.1927
14. महात्मा गाँधी : मेरे सपनों का भारत, नवजीवन प्रकाशन, अहमदाबाद, 1947, पृ. 74
15. यंग इण्डिया : 15.11.1928
16. यंग इण्डिया : 13.11.1924
17. महात्मा गाँधी : हिन्द स्वराज, नवजीवन प्रकाशन, अहमदाबाद, 1959, पृ. 107
18. डॉ. धीरेन्द्र मोहन दत्त : महात्मा गांधी का दर्शन, बिहार हिन्दी गंथ अकादमी, पटना पृ. 82–83
19. हरिजन : 02.11.1934
20. हरिजन : 29.08.1936
21. ए.एस. हक : द इकोनोमिक्स ऑफ ग्रोथ एण्ड एम्पलायमेंट, रमेश दीवान एवं मार्क्स लुट्ज द्वारा सम्पादित ऐसेज इन गाँधीयन इकोनोमिक्स, गाँधी शान्ति प्रतिष्ठान न. दि. 1985 पृ. 1621